विकल्परहित, सामग्रीरहित, मनरहित, वाणीरहित, देहातीत ऐसा, आत्मा के आनंद में से जो पावर फटकर जो पर्याय निकली... पूर्णानंद.. पूर्णानंद.. उसके आनन्द की तुलना कहाँ दूसरे के साथ? ऐसा मोक्ष जाने नहीं और स्वर्ग के साथ मिला दे तो वह मिथ्यादृष्टि है, उसे मोक्षतत्त्व की खबर नहीं है। विशेष कहेंगे...

(श्रोता :-- प्रमाण वचन गुरुदेव!)

बुधवार, दि. १५-८-१९६२,
सातवाँ अधिकार, प्रवचन नं. ७

सातवाँ अध्याय चलता है। उसमें क्या अधिकार (है)? सेठाई का, अरबोपति का जो सुख है वह तो सामग्रीजनित (है)। वह पहले कल आ गया है। सामग्रीजनित सुख है, पहले आ गया है। क्या कहते हैं? इन्द्र को सुख है वह सामग्री (जनित है)। पूर्व का जो पुण्यबन्ध था (उसके फलस्वरूप है)। ... सामग्री तरफ झुकाव हुआ, हम सुखी हैं ऐसी कल्पना की वह जहर है, राग है, दुःख है। समझ में आया? इन्द्र का सुख और अरबोपति का सुख या बड़े राजा-महाराजा का सुख, उससे सिद्ध परमात्मा अथवा मोक्ष का सुख अनन्तगुना तुम कहता है (तो) तेरी बड़ी विपर्यासबुद्धि है। क्योंकि संसार का पुण्य का सुख जो है वह सामग्रीजनित पूर्व का पुण्य है वह फला (तो) यह धूल मिली। पाँच-पचास लाख, क्रोड़, पाँच करोड़, दस करोड़ (मिले)। समझ में आया? धूल.. धूल। बराबर है? धूल मिली तुझे और उस धूल में इन्द्र भी, हमें सुख है, हमें उसमें आनन्द है, इस प्रकार राग के सुख की कल्पना में वह आनन्द मानता है।

और मोक्ष का सुख राग नहीं। मोक्ष का सुख तो आत्मा का आनन्द, जैसे चना होता है, कच्चा चना, कच्चा चना होता है न? हमारे बनिये में कहते हैं, डाळिया थया कांई शुक्रवारिया? ऐसा कहे, शुक्रवार हो तब। चने में, जना जब पक्का होता

है... समझ में आया? तब चना में जो मीठास है वह बाहर प्रगट होती है। बराबर है? क्या कहा? यह कच्चा चना है न, कच्चा चना? चना है तो वावो.. वावो को क्या कहते हैं? बोना। आप की हिन्दी भाषा पूरी नहीं आती है। यदि चना को बोवे तो ऊग जाये, खावे तो तुरा लगे, तुरा लगे, कसायेला लगे लेकिन उसको एक बार सेक दे (तो) बोवे तो ऊगे नहीं और तुरास का नाश होकर चना में जो मीठास का स्वाद पड़ा है वह प्रगट होता है। समझ में आया? वह मीठास अन्दर में पड़ी है। वह अग्नि से नहीं आयी। रेती में भुँजन किया उससे स्वाद नहीं आया। उससे स्वादा आता हो तो कँकर, कोयला को सेक डाले, यदि (उसमें से) स्वाद आता हो तो। उसमें स्वाद है ही नहीं। चना में तो अन्दर स्वाद पड़ा है वह अंतर में शक्ति है, वह जहाँ जलाया (तो) तुरास का नाश हुआ, स्वाद प्रगट हुआ, बोवे तो ऊगे नहीं, आनंद दे। यह दृष्टान्त (हुआ)। अब, आत्मा पर सिद्धांत। समझ में आया?

ऐसे भगवान आत्मा अपने में अन्दर आनंद पड़ा है, आनंद आत्मा में है, जैसा चना में स्वाद है ऐसे आत्मा में आनंद पड़ा है। भगवान जाने आनंद कहाँ होगा? उस आनंद में अज्ञान के कारण, मैं आनंद नहीं, मुझे तो यह पुण्य-पाप का फल, सामग्री, इन्द्र और इन्द्रासान, वैकुंठ, स्वर्गादि का भव (हो) उसमें हमें आनंद है। तो कहते हैं कि वह तो राग की जात है, जहर की जात है। स्वर्ग का सुख तो राग की, कषाय की, मिलनता की जात है, उससे तू मोक्ष का सुख अनन्तगुना कहता है तो उस जात से अनन्तगुना जहर आया। समझ में आया? एक बिन्दु जहर, अनन्तगुना जहर, गुणाकार करे तो जहर से अनन्तगुना जहर का गंज आता है। उसमें कोई अमृत आता नहीं। ऐसे इन्द्र की इन्द्राणी का सुख और.. यहाँ तो कहाँ ऐसे कोई राजा ही है।

इन्द्र, महाराजा, चक्रवर्ती और वासुदेव, बलदेव तीर्थंकर के समय में होते थे। इतनी सामग्री, कहते हैं कि उस सामग्रीजन्य जो राग आया उसमें विकारी सुख मानता है, उससे अनन्तगुना मोक्ष में सुख है, ऐसा माननेवाला मूढ है। क्योंकि वह राग की जात है और मोक्ष में सुख तो आत्मा का आनन्द है। अंतर आनन्द आत्मा है, उसकी एकाग्रता करके आत्मा की प्रतीति करते हैं कि मैं तो आनन्द शांतरस का कंद हूँ। मैं शरीर नहीं, वाणी नहीं, मन नहीं, कुटुम्ब नहीं, पुण्य-पाप का फल मैं नहीं। और मेरी दशा में वर्तमान शुभ और अशुभ, पुण्य और पाप भाव होता है वह भी मैं नहीं। मैं होऊँ तो मेरे से छूटा पड़े नहीं और छूटा पड़ता है वह मैं चीज नहीं। समझ में आया? मैं तो आत्मा अखण्ड आनन्द, सच्चिदानंद, निर्मलानंद प्रभु (हूँ)। मेरी पर्याय नाम हालत में दया, दान, व्रत, जप, तप की वृत्ति उठती है वह भी राग है। वह

पुण्यबन्ध का कारण है। उस पुण्यबन्ध से धूल मिलती है। आत्मा का लाभ उससे किंचित् होता नहीं। समझ में आया? बहुत कठिन बात है।

एक बार मैंने कहा था न? कौन-सा गाँव कहा? तोरी, तोरी। तोरी में हम गये थे। दो साल हुए। (संवत) २०१६की साल। लोग बहुत आये न, नाम प्रसिद्ध तो है न। चारों ओर से बगसरा और सेठ लोग आये थे। नरभेरामभाई इत्यादि आये थे। खचाखच लोग थे। व्याख्यान तो हुआ कि आत्मा में आनन्द है। अध्यात्मदृष्टि किये बिना पुण्य-पाप के भाव में लाभ माननेवाला मिथ्यादृष्टि है, मूढ है। उसे धर्म होता नहीं। रात्रि को खेती करनेवाले कणबी होते हैं न? कणबी कहते हैं? किसान। किसान को खबर पड़ी, स्वामीनारायण (माननेवाले) किसान को। गाँव में बहुत घर है। तोरी.. तोरी, २०१६ की साल। उनको मालूम पड़ा कि, एक महाराज आत्मा की बात करते हैं। महाराज! हम तो जंगल में थे। आप की बात तो हो गयी। अब? एक पुस्तक लेकर आये। अगाधगति नाम का पुस्तक उसके पास था। किसान बहुत, बहुत किसान। उसमें पढ़ते-पढ़ते उसे समझ में नहीं आता था कि यह क्या है? उसमें ऐसा लिखा था... कहा, पढ़िये, हमने तो कभी वह पुस्तक पढ़ा नहीं है। तत्त्व क्या है यह आप पढ़ो तो हमें मालूम पड़े।

अगाधगति नाम का पुस्तक, उसमें ऐसा लिखा था... तोरी नहीं? तोरीवाले नहीं रहते हैं? तोरावाले ताराचंदभाई वहाँ मुंबई में रहते हैं न? ताराचंदभाई न? तोरी के है न? हमारे कुंवरजीभाई के समधी ताराचंदभाई, तोरी(वाले) उनका गाँव। उनके मकान में ही हमने आहार किया था, दो साल हुए। उसमें ऐसा लिखा था कि, कोई भी प्राणी जप, तप, दया, दान, व्रत, भक्ति, पूजा, सेवा ऐसे बहुत बोल थे, उसे करनेवाले को यहाँ संसार मिलेगा। धर्म-बर्म होगा नहीं, उसको मोक्ष होगा नहीं। लक्ष्मीचंदजी! ऐसा उसके ग्रंथ में निकला। वह तो बेचारे दिन में आ सके नहीं, रात्रि में सब मिलकर आये, पुस्तक लेकर। अगाधगति, अगाधगति। अरे..! आत्मा! तेरी गति कोई अगाध है। समझ में आया? ऐसा बहुत लिखा था। इतने सारे शब्द थे। व्रत पालो, दया पालो, अहिंसा पालो, तप करो, उपवास करो, जाप करो, भगवान का स्मरण करो, गुणग्राम करो, दान दो, भक्ति-पूजा, यात्रा करो, इन सब का फल संसार में रुलने का है। उसका (फल) यहाँ है, ऐसा उसमें पाठ था। उसका फल यहाँ है। धूल मिलेगी यहाँ की सामग्री। वाड़ीभाई! देखो भाई! हमने जो दोपहर को कहा था वह उसमें निकला, देखो!

दोपहर को हमारा व्याख्यान था, वह तुम्हारे पुस्तक में निकला। देखो तो सही, क्या चीज है। मालूम नहीं, मालूम नहीं। वह तो ओघे-ओघे जिस संप्रदाय में जन्मा

उसमें जो कहा वह सच्चा और ऐसे ही गप्प मारे तो भी माने सच्चा, जिंदगी चली जाये। अनंत-अनंत काल में... उसमें तो बहुत लिखा है, यहाँ फलेगा, यहाँ फलेगा, यहाँ फलेगा। उसमें मुक्ति-बुक्ति है नहीं। आहाहा..! समझ में आया? ...लालजी! ऐसा लिखा था। अगाधगति। अरे.. आत्मा! तेरी तो कोई अगाधगति है। दया, दान के विकल्प की वृत्ति से कोई धर्म मानता है और मनाता है, वह सब आत्मा के न्याय से लूटनेवाले हैं। समझ में आया? प्राणभाई! बहुत कठिन भाई! पूरा जगत तो उसे धर्म माने।

मुमुक्षु :-- जगत माने, ज्ञानी न माने।

उत्तर :-- ज्ञानी न माने एक। धर्मीजीव सम्यग्दृष्टि उसे धर्म न माने। जैसा पापबन्ध है--हिंसा, जूठ, चोरी, विषय, कमाना.. क्या होगा यह? ये आप का कमाने का भाव पाप होगा या पुण्य? लेकिन आप लड़के के लिये कमाते हो, तुम्हारे लिये? पाप। जितना कमाने का भाव है (वह) पाप और फले वह पैसा पूर्व के पुण्य का फल। वर्तमान पाप की नयी लोन ले, नयी, वह भविष्य में पाप भोगेगा। समझ में आया?

मुमुक्षु :-- कोई व्यापार नहीं कर सकेगा।

उत्तर :-- कौन करता था? अज्ञानी दुकान पर बैठा-बैठा राग और द्वेष करे, बाकी तीसरी कोई चीज वह कर नहीं सकता। कुंवरजीभाई! वह तो कल कुंवरजीभाई को याद दिलाया था। शुभ और अशुभ भाव, दो के सिवा तीसरा उसने अनंत काल में कभी किया नहीं। जड़ की क्रिया शरीर हिलाना आदि आत्मा कर सके ऐसा तीन काल में नहीं है। मरते वक्त देह ऐसा हो जाता है। भाई! कुछ बोलो। कौन बोले? यह तो जड़ है, यह तो मिट्टी है, धूल है। आत्मा तो सच्चिदानंद अरूपी ज्ञानघन भिन्न तत्त्व है। उस तत्त्व की खबर बिना, हमने किया, शरीर का किया, कुटुम्ब का किया, ज्ञाति का किया, धंधा बहुत किया, ऐसा-ऐसा करके हमने पाँच-पचास करोड़ इकट्ठा किया। मूढ! तेरी मान्यता में बड़ी विपरीतता है। बाहर से मिलता है वह तो पूर्व का पुण्य पड़ा हो (उससे मिलता है)। हुन्नर करो हज़ार, भाग्य बिन मिले न कोड़ी। लाख तेरा हुन्नर कर, पूर्व का पुण्य सत्ता.... हाँ, पूर्व में कोई शुभभाव किया हो, दया, दान का, व्रत का कोई शुभभाव किया हो तो पुण्यबन्धन हो जाये और पुण्यबन्धन के पाक के काल में सोगठी गोठवाजय जाय। सोगठी समझते हो? नहीं समझते? पासा खेलते हैं न? भैंस, गाय सोगठी रखते हैं कि नहीं? समझ में आया? पोपटभाई! समझ में आया? यह हमारी गुजराती भाषा है। समझ में आता है कुछ?

कहते हैं कि पूर्व पुण्य का फल। सुखड़ी का ... करते हैं न?

मुमुक्षु :-- पहले करते थे, अब गया।

उत्तर :-- अब गया? हमने तो वह देखा था, भाई! सुखड़ी का तह करते हैं।

मृत्यु के बाद भोज करना हो, वृद्ध सदस्य चल बसे हो तो सुखड़ी (बनाकर खिलाये)। जैसा सुखड़ी का तह आये वह खाना। कच्चा आये तो कच्चा और पक्का आये तो पक्का और लाल हो जाये, सुखड़ी थोड़ी लाल भी हो जाती है, दलदार हो, दो तसु, तीन तसु दलदार आये वह खाना। ऐसे पूर्व का पुण्य और पाप का जैसा भाव किया हो उतना परमाणु कर्म का दल की सुखड़ी पड़ी है, उसके पाक के काल में जो आया वह लेना, मिला। वह उसको मिला नहीं। उसके पास चीज आयी। यह मानता है कि मुझे मिला। वह उसने ममता की। वह चीज तो चीज में रही। वह चीज यहाँ आती नहीं और यह वहाँ घुस जाता नहीं।

अनादि काल से पुण्य का परिणाम, उसका फल, हमको धर्म होगा ऐसी मान्यतावाले को आचार्यदेव कहते हैं कि, इन्द्र के सुख से सिद्ध का मोक्ष का सुख तूने अनंतगुना माना। तेरी जात में फ़र्क़ है तो तेरी मान्यता में भी फ़र्क़ है। जिस कारण से पुण्यबन्ध हो, उस कारण से धर्म हो, ऐसी तेरी मान्यता तो, इन्द्र के सुख से मोक्ष का सुख अनन्तगुना जाति से मान रखा है। यह तेरी मान्यता में बड़ी आठ पानशेरी की भूल है। आठ पानशेरी समझते हो? मण में मण की भूल। मण में मण की भूल। समझ में आया?

यहाँ तो आचार्य वह बात कहते हैं, भगवान! तेरे संसार की सामग्री का फल, उसको तू अनन्तगुना मोक्ष का सुख मानता है, तेरी बड़ी मिथ्याश्रद्धा है। अज्ञान पाखंड तेरी दृष्टि में है। हमने ऐसा क्यों नहीं जाना? देखो, यहाँ कहते हैं न? '**शास्त्र में भी तो इन्द्रादिक से अनन्तगुना सुख सिद्धों के प्ररूपित किया है।**' शिष्य ने प्रश्न किया, हम क्या कहते हैं, हम तो कहते हैं लेकिन शास्त्र ऐसा कहते हैं, ऐसा शिष्य प्रश्न करता है। देखो है न? '**इन्द्रादिक से अनन्तगुना सुख सिद्धों के प्ररूपित किया है।**' मोक्ष, सिद्ध यानी मोक्ष। परमात्मदशा जो हो। जैसे उस चनामें से पूर्ण मीठास प्रगट हो बाद में ऊगता नहीं। ऐसे आत्मा का आनन्द अन्दरमें से अनुभव करके पुण्य-पाप का राग से हटकर अपना चैतन्य भगवान आनन्दकंद (है), ऐसी दृष्टि और अनुभव करते-करते पूर्ण मोक्ष की प्राप्ति होती है। वहाँ अब थोड़ा दुःख या राग या संसार में अवतरना वह परमात्मदशा में होता नहीं।

शिष्य कहता है, महाराज! हमारा आप निषेध करते हो कि स्वर्ग के सुख से अनन्तगुना सुख हम मोक्ष में माने तो हम मूढ है, हमारी दृष्टि विपरीत कहते हो। लेकिन हम तो शास्त्र में लिखा आप को बताते हैं। समझ में आया? '**शास्त्र में भी तो इन्द्रादिक...**' इन्द्रादि आदि माने राजा, महाराजा, अरबोपति खमा खमा होता हो न? एक-एक दिन की पचास-पचास हजार की कमाई। आहा..! मैं चौड़ा और

गली सँकड़ी। कुंवरजीभाई! आहाहा..! क्या है आहाहा..? ऐसी धूल तो अनन्त बार मिली है और उसके कारणरूप पुण्यभाव भी तू अनन्त बार कर चुका है। लेकिन आत्मा क्या है उसकी पीछान कभी एक सेकण्ड भी नहीं की। 'जे स्वरूप समज्या विना' श्रीमद् कहते हैं न? श्रीमद् राजचंद्र, पहले श्लोक में। २९ वर्ष की आयु में उसने १४२ श्लोक बनाये। उसको जातिस्मरण तो सात वर्ष से था।

श्रीमद् राजचंद्र ववाणिया के दशाश्रिमाली वणिक थे। उनका संवत १९२४ में जन्म हुआ था और संवत १९३१ में सात वर्ष की उम्र में पूर्व भव का भान था। जातिस्मरण--इस भव के पहले मैं क्या था, वह (स्मरण) आ गया। फिर सोहल वर्ष उम्र में एक 'मोक्षमाळा' बनायी। सोलह वर्ष, दस और छः। १०८ पाठ बनाकर नाम (दिया), मोक्षमाळा। माला में १०८ मणका होता है न? १०८ मणका। १०८ पाठ बनाकर मोक्षमाळा बनायी।

बाद में ... 'बहु पुण्य केरा पुंजथी शुभदेह मानवनो मळ्यो, तोये अरे.. भवचक्रनो आंटो नहीं एक्के टळ्यो।' आत्मा का सुख क्या है, मालूम नहीं। 'सुख प्राप्त करतां सुख टळे छे लेश ए लक्षे लहो, क्षण-क्षण भयंकर भावमरणे कां अहो राची रहो।' क्या कहते हैं? क्षण-क्षण में तुझे पुण्य और पाप का भाव उत्पन्न होता है वह मेरी चीज है और मुझे लाभदायक है ऐसी मान्यतावाले का आत्मा का आनन्द लूट जाता है। आत्मा का आनन्द लूटता है। आत्मसिद्धि.. समझ में आया? आत्मसिद्धि की शुरूआत की २९ वर्ष में।

'जे स्वरूप समज्या विना पाम्यो दुःख अनंत, समजाव्युं ते पद नमुं श्री सद्गुरु भगवंत'। पहला श्लोक यह बनाया, ऐसा करते हुए डेढ़ घण्टे में १४२ श्लोक बनाये। समझ में आया? कहते हैं कि अनन्त काल में तूने, आत्मा प्रभु सच्चिदानंद आनंदकंद क्या है, अपना आत्मा में आनंदरस पड़ा है और शुभ और अशुभ दया, दान, व्रत, काम, क्रोध के भाव में दुःख है। आहाहा..! समझ में आया? जगत से तो निराली चीज है। अनंत-अनंत काल से परिभ्रमण किया, कभी उसने आत्मा की चीज क्या, एक सेकण्ड पीछानी नहीं। एक सेकण्ड भी पीछाने (तो), जैसे पर्वत में बड़ी बिजली गिरने से दो टूकड़े हो जाये, वह टूकड़े फिर मिलते नहीं। रेण देने से, रेण समझते हो? क्या कहते हैं? संधि मारते हैं न? बिजली के कारण दो टूकड़े हो जाये तो जोड़ने से वापस जुड़ते हैं?

ऐसे भगवान आत्मा, पुण्य और पाप के राग से रहित मेरी चीज अन्दर भिन्न है, एक सेकण्ड भी सम्यग्दर्शन और ज्ञान हुआ, उसको जन्म-मरण का अंत आता है। समझ में आया? और उसके बिना अनन्त बैर 'यम नियम संयम आप कियो,

पुनि त्याग वैराग्य अथाग लह्यो'। 'यम नियम संयम त्याग कियो, यम नियम संयम आप कियो, पुनि त्याग वैराग्य अथाग लह्यो, मुख मौन रह्यो,' मुख मौन रह्यो। 'जप भेद जपे तप त्यों ही तपे, सबसे उदासी लही सबपै' सब से उदास। सब त्याग (किया)। अरे...! लेकिन तेरा आत्मा क्या उसे एक समय पीछाना नहीं। ऐसी क्रियाकांड अनंत बैर की, जिसमें अज्ञानी ने धर्म माना और मनाया, मनाया (कि) तुझे धर्म होगा, धीरे-धीरे होगा। दुकान छोड़कर बैठे हो तो तुमको धर्म है। धूल में भी नहीं है, सुन तो सही। दुकान छोड़ी ही नहीं है तुने। अन्दर में एक राग का कण शुभ आये उसको भला मानना, वह अनंती कसायखाना की दुकान चलाता है। समझ में आया? कठिन बात है कठिन। जगत को जन्म-मरण रहित की क्या चीज है वह सुनने में आयी नहीं, तो श्रद्धा कहाँ-से आये? ज्ञान तो कहाँ-से हो? और चारित्र तो कहाँ रहा? वह तो आत्मा का अनुभव सम्यग्दर्शन होने के बाद स्वरूप में आनंद में लीन होना उसका नाम चारित्र है। बाहर की क्रियाकांड को भगवान चारित्र कहते नहीं। समझ में आया?

कहते हैं, आत्मा के स्वरूप का भान नहीं (हुआ तो) 'पाम्यो दुःख अनंत'। ऐसा नहीं कहा कि फलानी क्रिया पुण्य की नहीं करी, इसलिये 'पाम्यो दुःख अनंत'। समझ में आया? अरे.. भगवान! तुझे मालूम नहीं। तुम तो अनादि का है, अनादि... अनादि.. अनादि... आदि नहीं, कब से? कब से? कब से क्या? अनादि का है।

मुमुक्षु :-- केवली..

उत्तर :-- केवली भी अनादि देखते हैं। भगवान सर्वज्ञ परमात्मा भी आत्मा को अनादि देखते हैं। आदि नहीं। है, है और है। जो चीज न हो, 'नाशतो विद्यते भावो'। न हो वह नयी होती नहीं, हो वह पुरानी पलटकर बदले परन्तु नाश नहीं होता। रूपांतर हो, नाश होता नहीं। अनादि काल से आत्मा और परमाणु यह मिट्टी, यह जड़ जड़ मिट्टी जड़, पैसा जड़, दाल-चावल जड़, मिट्टी जड़, शरीर की चमडी खुन सुन्दर दिखे वह मिट्टी मांस की हड्डियाँ जड़। अनादि चैतन्य और जड़ अनादि तत्त्व है, वह कोई नया है नहीं। ऐसा आत्मा अनादि का चौरासी के परिभ्रमण में भटका और उसने पुण्य-पाप के फल में, पाप के फल में तो थोड़ा उसको ठीक लगे कि आहा..! पाप तो बहुत खराब, हाँ! उससे नर्क मिले, तिर्यंच योनि मिले, यह पशु योनि मिले। पुण्य से तो ... पोपटभाई! दान में पाँच-पचास खर्च करे तो? कुछ भी धर्म का प्रथम स्थान मिले की नहीं? समझ में आया? अरे..! तेरे पाँच-पचास लाख क्या, पचास क्रोड़ हो और शरीर भी बेच दे न। धर्म उसमें किंचित् नहीं है। आहाहा..! वह तो पुण्य परिणाम, उस क्रिया को अज्ञानी धर्म मानता है और उससे अनन्तगुना

मोक्ष में (सुख मानता है)।

तो आचार्य कहते हैं, सुन! हमने शास्त्र में इन्द्र के सुख की अपेक्षा मोक्ष का सुख जो अनन्तगुना कहा, उसमें हमारा क्या आशय है वह तू सुन। मोक्ष का सुख और स्वर्ग के सुख की जात एक नहीं, एक नहीं। जहर और अमृत की जात एक नहीं। संसार का सुख तो जहर, ज़हर और ज़हर (है)। ज़हर का कटोरा।

मुमुक्षु :-- ज़हर में मज़ा आता है उसका क्या?

उत्तर :-- मज़ा आये वह तो हरखसनेपात... वह तो एक बार दृष्टान्त कहा था न? एक बच्चा हो, साल-डेढ साल का। गरमी का धूप होता है न? ज्येष्ठ महिने की बहुत गरमी। उसकी माँ को मालूम न हो तो दूध बहुत पिलाया हो तो टट्टी हो जाती है। टट्टी बहुत पतली होती है। देखा है कभी? हमने तो सब देखा है। पतली टट्टी में हाथ डालकर (चाटे)। ठण्डा लगे न, गरमी बहुत होने के कारण हाथ डाले। वह चाटे। धन्नालालजी! यह दशा संसार की है। आत्मा की पर्याय में--दशा में पुण्य और पाप दोनों भाव विष्टा है। समझ में आया? माने कहाँ-से? कभी समझ की नहीं। आहाहा..! मज़ा, मज़ा, मज़ा वह लड़के को टट्टी का स्वाद आता है, ऐसी मज़ा संसार के पुण्य के फल में है। प्राणभाई! सत्य होगा यह? आप के पिताजी पैसा छोड़ गये हैं, बहुत लाख। तो उसको सुख होगा कि नहीं? बहुत लोग ऐसा कहते हैं, बहुत सुखी है।

मुमुक्षु :-- जन्म से सुखी है।

उत्तर :-- जन्म से सुखी ऐसा कहते हैं। उनके पिताजी छोड़ गये हैं, पंद्रह लाख जितना। सुखी होगा कि नहीं? धूल में भी नहीं है, सुन न अब। ए.. पोपटभाई! ये सब मक्खन लगाये, हाँ! पैसेवाले को। नानालालभाई थे न? नानालालभाई है न? नानालाल कालीदास। बेचरदास कालीदास अभी चल बसे न? उनके समधी एक बार यहाँ आये थे। समधी आये (और कहने लगे), अहो..! हमारे समधी बहुत सुखी हैं। वढ़वाण के थे, वढ़वाण के। चुडगर, चुडगर लो। चुडगर आये और कहा, हमारे समधी बहुत सुखी हैं। सुखी की व्याख्या, क्या कहा? सुखी की व्याख्या, क्रोड़पति है इसलिये? जसाणी करोड़पति है और पाँच-सात लाख की कमाई है इसलिये? कौन कहता है सुखी? हें? धूल में भी सुखी नहीं है। गाड़ी चड़ी है सर पर। वह गाड़ी में नहीं बैठा है, उसको निभाने की तृष्णा, निभाने की तृष्णा और उसकी इज्जत अनुसार रखने की तृष्णा उसके पर घोड़ा चढ़कर बैठा है।

मुमुक्षु :-- वह कहाँ मोटर में बैठे हैं।

उत्तर :-- वह कहाँ मोटर में बैठा है, वह तो उसमें बैठा है। बापू! सुख-

बुख धूल में नहीं है। क्रोड़पति भी सुखी नहीं है और अरबपति भी सुखी नहीं है। वह, इस लड़के की भाँति विष्टा (चाटता है)। वह विष्टा है। शास्त्रकार, सूकर को विष्टा का आहार होता है, ऐसा दृष्टान्त दिया है। वह विष्टा, मनुष्य का त्याग किया हुआ ख़ुराक है।

ऐसे ज्ञानी ने पुण्य का फल और पुण्य, विष्टा गिनकर श्रद्धा-ज्ञानमें से निकाल दिया है। ऐसा पुण्य का फल सूकर जैसा मिथ्यादृष्टि, लक्ष्मी में मज़ा सूकर की भाँति मानता है। समझ में आया? मनुष्य अनाज खाता है। लोथा, बाजरा और ज्वार का दाना। उसमें से विष्टा निकली वह सूकर खाता है। आचार्यदेव दृष्टान्त देते हैं, अरे.. भगवान! एक बार सुन तो सही। तूने तेरी चीज और विकार क्या, यह तूने कभी सुना ही नहीं। अनंत काल में त्यागी हुआ, भोगी हुआ, अरबोपति हुआ। अनादि का आत्मा है, कहाँ पहली बार का है। अनंत बार अरबोपति हुआ, अनंत बार जैन साधु हुआ, अनंत बार। समझ में आया? लेकिन तेरा आत्मा और अन्दर में पुण्य परिणाम क्या है, उसका भेदज्ञान कभी एक सेकण्ड भी किया नहीं। चार गति में रुला और परिभ्रमण किया। कहते हैं, मनुष्य का ख़ुराक तो अनाज (है)। उसके ख़ुराक की विष्टा (बनी) वह सूकर की ख़ुराक।

ऐसे भगवान आत्मा सम्यक्ज्ञानी अंतरदृष्टि हुआ, अरे..! मैं तो आनंद हूँ, मेरी वर्तमान दशा में पुण्यभाव जो उत्पन्न होता है, दया, दान, व्रत, वह तो विष्टा समान निकाल देने की चीज है। उस निकालने की चीज को सूकर जैसा मिथ्यादृष्टि, उसमें धर्म माने और मनाते हैं उसको सूकर की उपमा आचार्य देते हैं। उनको कहाँ चंदा इकट्ठा करना है किसी से कि अच्छा लगेगा या नहीं लगेगा? पैसेवाले को चंदा इकट्ठा करना हो कि इसमें पाँच हजार भरना, दो हजार भरना। भरे, ना भरे (उसके घर रहा), यहाँ कहाँ काम है। आचार्य सत्य बात जगत समक्ष प्रसिद्ध करते हैं। आहाहा..! अरबोपति सूकर जैसा। भाव.. भाव।

भगवान! तेरी चीज तो आनंद है न। उसकी तो तूने कभी प्रतीत की नहीं। और पुण्य के फल में ज्यादा से ज्यादा पाप का फल नहीं। खराब, खराब (जाना) लेकिन पुण्य के बन्धन को तूने भला माना। तो बन्धन को भला माननेवाला मिथ्यादृष्टि है। ऐसी श्रद्धा अनंत काल में एक सेकण्ड भी की नहीं। ज्ञानी द्वारा निकाली गयी विष्टा... स्वाद लेता है, स्वाद। अभी हमें बादशाही है। ऐसे बैठा हो, मानो चक्रवर्ती बैठा हो! पाँच-पच्चीस लाख मिले हो और कुटुम्ब-कबीला आज्ञांकित कुटम्ब इकट्ठा होकर बैठा हो, क्या है? अभी हमें बादशाही है। किसकी? दुःख की। वह नहीं बोले दुःख की हाँ! कहे? भान ही नहीं है। सनेपातिया.. सनेपात कहते हैं न? क्या कहते हैं? वात,

पित्त और कफ होता है न? खड़-खड़ हँसता है, खड़-खड़ हँसता है। साथ बैठा मनुष्य समझता है, अरे..रे..! अब दो-चार घण्टे में खत्म हो जायेगा। समझ में आया? हरख हनेपात। सनेपात में हँसता है। वह सुखी होगा? अन्दर मूढ हो गया है।

मुमुक्षु :-- ..

उत्तर :-- हाँ, ... दो-चार घण्टे में खलास हो जायेगा। हमने प्रत्यक्ष देखा है न। हँसे, बत्तीस साल का युवान था, लीमड़ा (गाँव में)। और सात-सात जन पकड़े तो भी पकड़ न सके और जोर-जोर से हँसे, लोग रोये, उसकी पत्नी आदि। अब सुबह नहीं होगी। लेकिन वह हँसता है न? जैसे वह हरख सनेपातिया हर्ष और खुशी मानता है, वैसे अज्ञानी पूर्व पुण्य के फल में खुशी बताये, हरख सनेपातिया है। सनेपात नहीं समझते हो? त्रिदोष। त्रिदोष हमारे में कहते हैं। वात, पित्त और कफ... वात, पित्त और कफ क्या? मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान और मिथ्याचारित्र, इन तीनों का बड़ा रोग हो गया है। मिथ्याश्रद्धा। समझ में आया?

यहाँ कहते हैं, वह सुख मानता है, लेकिन सुख है नहीं। वह सुख मानता है उसकी दृष्टि में ऐसा है कि पुण्य से अनन्तगुना सुख मोक्ष में होगा। लेकिन पुण्य तो ज़हर है। उसका फल मोक्ष में तू गिनता है (तो) तुझे मोक्ष की भी खबर नहीं, तुझे पुण्य की खबर नहीं और आत्मतत्त्व क्या है उसकी भी तुझे खबर नहीं। बेहोश अज्ञानी मूर्ख की भाँति बकता है। समझ में आया? प्राणभाई!

तब (शिष्य) कहता है, यह इन्द्रादिक का सुख शास्त्र में कहा है न? सुन! '**तीर्थंकर के शरीर की प्रभा को सूर्यप्रभा से कोटि गुनी कही,...**' परमात्मा, देह--शरीर में जब सर्वज्ञपद (प्रगट) होता है... सर्वज्ञ--जैसे चौसठ पहोरी पीपर, पीपर समझते हो? लिंडीपीपर--छोटीपीपर, उसमें चौसठ पहोरी तीखास भरी है। तीखास समझते हो? चरपराई। हिन्दी भाषा में चरपराई कहते हैं। एक-एक पीपर के दाने में चौसठ पहोरी चरपराई अन्दर पड़ी है। वह चौसठ पहोरी जब प्रगट होती है, कहाँ-से आयी? पत्थरमें से? कँकर को घिस डालो। धूलमें-से निकले? पीपर के दाने में चौसठ पहोरी पीपर में रस पड़ा है, रस--तीखा रस--चरपरा रस। है उसमें से निकलता है। प्राप्त की प्राप्ति है और वह वहाँ से मिलती है। पूर्ण दशा जब हो गयी, चौसठ पहोरी हो गयी। अब उसको घिसना रहा नहीं। वह पुनः तिरसठ होती नहीं। तिरसठ होती नहीं और अब घिसने की आवश्यकता नहीं।

ऐसे भगवान आत्मा, समझ में आया? एक सेकण्ड के असंख्य भाग में अन्दर पूर्णानंद एकाकार आनन्द तो पड़ा है, चौसठ पहोर, चौसठ नाम सोलह आना, चौसठ नाम सोलह आना, चौसठ पैसा--एक रूपया--पूर्ण सब एक अर्थ में है। एक-एक पीपर

के दाने में चौसठ पहोरा पूर्णानंद पड़ा है वह बाहर प्रगट होता है। ऐसे भगवान आत्मा, प्रत्येक देह में विराजमान, एक-एक छोटीपीपर में जैसे चौसठ पहोरी (चरपराई) है, ऐसे एक-एक आत्मा में अन्दर में पूर्णानंद है। इस आनन्द का अन्दर अनुभव करके पूर्ण दशा जहाँ प्रगट हुई उसको तीर्थंकर कहते हैं। और उनके पूर्व पुण्य के कारण इन्द्र बड़ी सभा रचते हैं। अपने यहाँ समवसरण है न? दिखाव किया है। इन्द्र ऊपर से ऊतरकर सभा करते हैं। उस तीर्थंकर की यहाँ उपमा देते हैं।

तीर्थंकर का शरीर ऐसा होता है कि '**सूर्यप्रभा से कोटि गुनी,...**' शरीर की प्रभा, उस सूर्य की प्रभा से कोटि गुनी (होती है)। सुन्दर शरीर निर्मल। सर्वज्ञ परमात्मा जब आत्मा, चौसठ पहोरी चरपराई पड़ी है ऐसे प्रगट होती है एक-एक दाने में, ऐसे जब आत्मा में पूर्ण शक्ति पड़ी है उसका अनुभव करके आत्मा में पुण्य-पाप से हटकर, देह की क्रिया मेरी नहीं, पुण्य-पाप विकल्प उठते हैं वह मेरे नहीं, ऐसा अंतर में अनुभव करते-करते जब केवलज्ञान होता है, तो तीर्थंकर का शरीर परम औदारिक स्फटिक जैसा दिखे। स्फटिक! उनके पास शरीर में कोई देखे तो सात भव देखे। सात भव। इतना शरीर सुन्दर। उनकी बात आचार्य कहते हैं, देखो भैया!

इन्द्रादि के सुख से अनन्त गुना सिद्ध का सुख कहा, वह तो अपेक्षा से कहा है। कौन-सी अपेक्षा? यह। '**तीर्थंकर के शरीर की प्रभा को सूर्यप्रभा से कोटि गुनी कही, वहाँ उनकी एक जाति नहीं है;...**' कहाँ सूर्य का प्रकाश और कहाँ भगवान का शरीर परम औदारिक स्फटिक रत्न जैसा हो गया। समझ में आया? जहाँ बारह सभा व्याख्यान सुनने को आती है। इच्छा बिना ॐ की ध्वनि निकलती है। इच्छा बिना ॐ ध्वनि और सिंह, बाघ, हाथी, राजा, महाराजा और इन्द्रों सभा में सुनते हैं, ऐसे तीर्थंकर की प्रभा को '**सूर्यप्रभा से कोटि गुनी कही, वहाँ उनकी एक जाति नहीं है;...**' जात एक नहीं। यह तो औदारिक की प्रभा महान दूसरी जात की है।

'**परन्तु लोक में सूर्यप्रभा की महिमा है, उससे भी अधिक महिमा बतलाने के लिये उपमालंकार करते हैं।**' उपमालंकार है। (कहाँ) सूर्य और कहाँ प्रभु का शरीर! उतना स्फटिक, जिसमें रोग नहीं, क्षुधा नहीं, तृषा नहीं। अंतिम केवल पूर्ण दशा जहाँ प्रगट हो, वह परमात्मदशा (है)। शरीर में रोग नहीं होता, क्षुधा नहीं होती, आहार नहीं होता, पानी नहीं होता, कुछ नहीं होता। ऐसी शरीर की प्रभा को सूर्य से कोटि गुनी कही। जात एक नहीं, जात दूसरी है। परन्तु सूर्य की प्रभा दुनिया में विशेष गिनी जाती है उसकी उपमा इसको दी है।

'**उसी प्रकार सिद्धसुख को इन्द्रादिसुख से अनन्तगुना कहा है, वहाँ उनकी**

एक जाति नहीं है;...' इन्द्र के सुख का अनुभव करे और मोक्ष के सुख का अनुभव एक जाति नहीं है। जाति एक नहीं? '**परन्तु लोक में इन्द्रादिसुख की महिमा है,...**' दुनिया तो एक व्यंतर देव आये न, (तो) ऐसा... ऐसा.. (करे)। मूर्ख को... एक व्यंतर देव दिखे तो आहाहा..! अरे..! अनन्त बैर तू देव हुआ। क्या है उसमें? पूर्व में ऐसा पुण्य किया, ऐसा पुण्य किया कि मरकर देव हुआ। स्वर्ग का देव, वह भी एक धूल का शरीर है, उसमें कोई आत्मा का लाभ देह से है नहीं। तो कहते हैं, एक साधारण देव देखे आहाहा..! इसको मानो, नारियल फोड़ो, ऐसा करो। मूर्खता के कहीं अलग गाँव बसते होंगे? समझ में आया? हर गाँव में मूर्ख बसते हैं, उसका कोई अलग गाँव होता नहीं। ऐसे एक व्यंतर को देखे तो.. आहाहा..! पुत्र दे, यह दे, पैसा दे, जहाँ-तहाँ मान्यता में सर हिलाये। कहते हैं, '**सिद्धसुख को इन्द्रादिसुख से अनन्तगुना कहा है,...**' (उनकी) एक जाति नहीं है। स्वर्ग का सुख और मोक्ष की जाति एक नहीं। परन्तु इन्द्रादि सुख की बहुत (महिमा है)। महिमा दर्शायी।

'**फिर प्रश्न है कि वह सिद्धसुख और इन्द्रादिसुख की एक जाति जानता है--ऐसा निश्चय तुमने कैसे किया?**' क्या कहते हैं? प्रश्न किया। महाराज! अज्ञानी जीव, सिद्ध के सुख को और इन्द्र के सुख को एक जानता है, ऐसा आपने कहाँ-से निकाला? ये सब प्राणी अनादि से स्वर्ग का सुख और परमात्मा मोक्ष का सुख एक मानते हैं, ऐसा आपने कहाँ-से निकाला? शिष्य प्रश्न करता है।

'**समाधान :-- जिस धर्मसाधन का फल स्वर्ग मानता है,...**' सुन हमारी बात! अज्ञानी जिस धर्म का साधन का फल स्वर्ग मानता है, दया, दान, व्रत के परिणाम में स्वर्ग मानता है, '**उस धर्मसाधनही का फल मोक्ष मानता है।**' समझ में आया? वह जिसको धर्म मानता है वह पुण्य है, उस पुण्य का फल स्वर्ग है। फिर भी उससे मुझे मोक्ष मिलेगा ऐसा मानता है। समझ में आया? समझ में आया? क्या कहा? अज्ञानी की हम... जो जात पुण्य की है, दया, दान, व्रत, जप, तप, भक्ति, पूजा या व्रत पालना, दान करना वह पुण्यभाव है। उससे स्वर्ग भी मानता है और उससे धीरे-धीरे मोक्ष भी होगा (ऐसा मानता है)। है न? देखो!

'**कोई जीव इन्द्रादि पद प्राप्त करे, कोई मोक्ष प्राप्त करे,...**' पहले आ गया है। '**वहाँ उन दोनों को एक जाति के धर्म का फल हुआ मानता है।**' समझे? मालूम कहाँ है कि किस फल से स्वर्ग मिले और किस फल से मोक्ष मिले, मालूम नहीं। वह तो करो न अपने, उसमें से स्वर्ग भी मिलेगा और मोक्ष भी मिलेगा। ऐसी मान्यतामें से हमने निकाला कि रागमें से स्वर्ग मिलता है, वह सब राग की क्रिया है और उससे मोक्ष भी मिलता है, ऐसा वह मानता है तो हम कहते हैं कि

स्वर्ग की जाति का सुख और मोक्ष का सुख एक ही मानता है, भिन्न नहीं मानता है। उसकी श्रद्धा में भिन्नता का भास है नहीं। समझ में आया? समझे कि नहीं, पोपटभाई? शुं कह्युं आमां? शुं कह्युं यानी क्या कहा? उसको मालूम भी नहीं है बेचारे को, सुनने भी नहीं मिली है, कहाँ-से करे? समझ में आया?

'द्रव्यक्रिया रुचि जीवडा, भावधर्म रुचि हिन, उपदेशक पण तेहवा शुं करे जीव नवीन?' जो कुअेँ में हो वह बाहर आवे। अर्थात् द्रव्यक्रिया--यह व्यवहार यह करो, वह करो, दया, व्रत, भक्ति, पूजा उससे कल्याण होगा। ऐसा 'द्रव्यक्रिया रुचि जीवड़ा, भावधर्म रुचि हिन,' लेकिन उस राग से मेरी चीज भिन्न है, अनुभव में आने लायक दूसरी चीज है, उसका भान कभी किया नहीं। कैसे करे? 'उपदेशक पण तेहवा' ऊपर बैठकर कहनेवाले भी (ऐसे ही मिले)। 'माली मकवाणी अने जोगी जहलो', दोनों मिले। यहाँ हमारे काठियावाड़ में (कहावत) है, आप में भी कुछ होगा। जैसा जहला जोगी ऐसी माली मकवाणी। माली मकवाणी नटकटी थी, उसको कोई रखता नहीं। जहला जोगी को कोई मिलती नहीं थी, अकेला कुँआरा पैसा बिना का था। दोनों का मेल हो गया। ऐसे आचार्य कहते हैं, अनंत काल से उसको पुण्य की क्रिया, व्यवहार की क्रिया, दया, दान, व्रत, सामायिक, पौषध आदि राग में पुण्य भी होगा और क्रम-क्रम से मोक्ष भी होगा। ऐसा अज्ञानी मानता है, मनानेवाला भी मिल गया। समझ में आया? 'उपदेशक पण तेहवा, शुं करे जीव नवीन? हे चंद्रानन जिन सांभळीए अरदास।'

यह भगवान की स्तुति है, चंद्रानन भगवान। वीस विहरमान महाविदेह क्षेत्र में वर्तमान में विराजते हैं। साक्षात् तीर्थंकर त्रिलोकनाथ परमात्मा केवलज्ञानपने सीमंधरादि बीस तीर्थंकर महाविदेह क्षेत्र में मनुष्यदेह में सीधे विराजते हैं। समझ में आया? उसमें एक चंद्रानन भगवान की स्तुति की है। उसमें कहा कि, नाथ! हमारे भरतक्षेत्र की स ब गति बदल गयी है। आप का विरह पड़ा और भरतक्षेत्र के मनुष्य कैसा मानते हैं? क्या मानते हैं? द्रव्यक्रिया में धर्म मानकर मोक्ष होगा और पुण्य भी फलेगा। हमारे तो एक काज और... क्या कहते हैं? एक पंथ दो काज। पुण्य भी होगा और मोक्ष भी होगा। प्रभु! यह क्या हुआ? आप के शासन में क्या हुआ? लूटेरे मार्ग को लूट रहे हैं। पोकार.. पोकार किया है भगवान समक्ष। भगवान तो वीतराग है, वे तो कहीं सुनते नहीं। वे तो जानते हैं पहले से कि ये सब ऐसे निकलेंगे। उनको कोई इच्छा होती नहीं, इच्छारहित है, वह तो केवलज्ञान परमात्मदशा है। इच्छा होती नहीं। इच्छा बिना वाणी निकलती है। समझ में आया?

कहते हैं, '**कोई जीव इन्द्रादि पद प्राप्त करे, कोई मोक्ष प्राप्त करे, वहाँ उन दोनों को एक जाति के धर्म का फल हुआ मानता है।**' देखो! यह करते-

करते, ज़हर खाते-खाते पेट भी भरे और अपने कुछ खाया ऐसा भी मानना हो। ऐसे पुण्यक्रिया करते हुए स्वर्ग भी मिलेगा, पैसा मिलेगा, स्वर्ग मिलेगा और फिर मोक्ष मिलेगा। ऐसी मान्यता प्रभु जगत की है। वह मोक्षतत्त्व और आत्मतत्त्व को जानता नहीं। अनंत काल में एक सेकण्ड भी उसने पीछाना नहीं। समझ में आया?

जैसे सौ कळशी (तीनसौ चालीस किलो का माप) अनाज पकता है, तो सौ भरोटा (भरपूर) घास साथ में होता है। अभी छप्पन के (दुष्काल में) ऐसा देखा। हमारे यहाँ 'बाँटा' कहते थे। पाँच-छः इंच बारीश हुई थी। बाँटा समझे? ज्वार, बाजरे का इतना-इतना पौधा हुआ था। दाना नहीं। परन्तु दाना सौ कळशी पके और घास न हो ऐसा कभी नहीं बनता।

ऐसे जिसको आत्मा पुण्य-पाप के विकल्प राग से भिन्न मेरी चीज है, मेरा धर्म तो निर्विकार शुद्ध, विकार से रहित है ऐसा भान हुआ, उसके भानमें से मोक्षरूपी अनाज पकेगा। और बीच में थोड़ा दया, दान का रह गया उसको भी बीच में स्वर्ग अथवा श्रीमंताई मिलेगी। समझ में आया? घास के साथ अनाज। अज्ञानी को अकेला घास (मिलता है)। खड़ समझते हो? घास, घासफूस। पुण्य के फल में अकेला घास पकेगा। उसमें आत्मा को मोक्ष-बोक्ष है नहीं।

कहते हैं, धर्मीजीव को दोनों मिलते हैं--अपना स्वरूप पुण्य-पाप की क्रिया राग से भिन्न मानकर अपना अनुभव करके निर्मलता, जितनी निर्दोषता, आत्मिकता, पवित्रता, अकषायता, वीतरागता जितना स्वभाव का भान होकर प्रगट करते हैं, उसमें तो मोक्ष की फसल पकती है। परन्तु बीच में थोड़ा राग भक्ति का, पूजा का, दान का, दया का आता है उसमें श्रीमंताई और स्वर्ग मिलता है। परन्तु दोनों जाति जुदी है। अज्ञानी को अकेली धूल मिलती है। उसको तो धर्म नहीं, मोक्ष नहीं, सम्यग्दर्शन नहीं, सम्यक्ज्ञान नहीं। तीनमें से एक भी चीज उसे है नहीं। समझ में आया? क्या कहते हैं?

'**ऐसा तो मानता है कि जिसके साधन थोड़ा होता है वह इन्द्रादिपद प्राप्त करता है,...**' देखो! थोड़ा पुण्य करे तो इन्द्रपद मिले, बहुत पुण्य करे तो मोक्ष मिले। अरे..! तेरी मान्यता में बड़े छिद्र हैं, बड़ा छिद्र है। कठिन, कठिन जगत को बहुत।

मुमुक्षु :-- समझ में आये ऐसा है।

उत्तर :-- समझ में आये ऐसा है? क्या कहते हैं?

मुमुक्षु :-- सीधी बातें हैं।

उत्तर :-- सीधी बात, दो और दो चार है। उसमें कहीं तीन काल तीन लोक में बदले नहीं। सुना नहीं, जहाँ पड़ा हो वहाँ मान बैठा कि पैसा भी मिलता है,

पचास लाख हुआ हो तो पाँच लाख खर्चे, पाँच लाख में मोक्ष भी मिलेगा और रुपया भी रहेगा, एक पंथ दो काज। पोपटभाई!

मुमुक्षु :-- उलटा है।

उत्तर :-- उलटा है? पाँच लाख दे, उसका दसवाँ भाग (मिलेगा)। पचास डाले, उसका दसवाँ भाग, जाओ। दसवाँ भाग क्या, तेरे पचास लाख दे दे, और राग मंद कर तो पुण्य होगा, पैसा देने से पुण्य नहीं होता। पैसा तो जड़ है, जड़ उसके कारण जाता है। तेरी तृष्णा में मंदता हो, राग मंद हो, लोभ मंद हो तो पुण्य बँध जायेगा। समझ में आया? धर्म-बर्म नहीं। पैसा से धर्म होता हो तो गरीब को रोना पड़े। अरेरे..! उसको धर्म होगा नहीं। शरीर से धर्म होता नहीं तो पैसा से तो धर्म कहाँ-से आया?

अपना आत्मा देह, वाणी से तो पृथक् है, परन्तु पुण्य का भाव दया, दान, व्रत से भी मैं पृथक् हूँ, ऐसी अनुभवदृष्टि किये बिना धर्म का एक अंकुर कभी उत्पन्न होता नहीं। अनंत काल में न किया हो तो यह नहीं किया, बाकी तो धूलधमाहा अनंत बार किया। समझ में आया? वह क्या मानता है? देखो!

'**जिसके साधन थोड़ा होता है...**' आता है न? खामणा में आता है न? जघन्य हो तो ऐसा होता है, उत्कृष्ट तीर्थंकर गोत्र बाँधे। खामणा में आता है। उत्कृष्ट ... बाँधे। सब विपरीत बात। यहाँ कहते हैं, देखो भाई! अपने थोड़ा साधन करेंगे... थोड़ा को क्या कहते हैं? कम, कम। पुण्य का थोड़ा साधन करेंगे तो स्वर्ग मिलेगा और बहुत पुण्य करेंगे तो मोक्ष होगा। तेरी श्रद्धा में बड़ी विपरीतता है। थोड़ा पुण्य में स्वर्गादि मिलेगा और विशेष पुण्य हो तो भी स्वर्गादि मिलेगा, उसमें कोई धर्म-बर्म और मोक्ष-बोक्ष है नहीं। ऐसी मान्यता से हमने पकड़ लिया कि उसकी दृष्टि विपरीत है, ऐसा आचार्य कहते हैं। समझ में आया?

'**परन्तु वहाँ धर्म की जाति एक मानता है।**' धर्म की एक जात जानता है। इस धर्म से पुण्य भी होता है और उसी धर्म से मोक्ष भी होगा। '**सो जो कारण की एक जाति माने, उसे कार्य की भी एक जाति का श्रद्धान अवश्य हो;...**' जिसने एक जाति का कारण माना, उसे कार्य में भी सब फेरफार है। '**क्योंकि कारणविशेष होनेपर ही कार्यविशेष होता है।**' कारण में फेर हो तो कार्य में फेर हो। और यह तो कहता है कि कारण में हमें फेर नहीं है। पुण्य परिणाम से हमें स्वर्ग भी मिले और मोक्ष भी मिले। तो तेरी कारण की जाति स्वर्ग और मोक्ष की एक ही तूने मानी है। और तुझे धर्म की खबर नहीं और पुण्य किससे होता है यह भी तुझे खबर नहीं। '**कारणविशेष होनेपर ही कार्यविशेष होता है।**'

'**इसलिये हमने यह निश्चय किया कि उसके अभिप्राय में इन्द्रादिसुख और**

सिद्धसुख की एक जाति का श्रद्धान है।' उसकी श्रद्धा एक ही जात की है। समझ में आया? पोपटभाई! ये तुम्हारे वास्तु के घर आया। वास्तव में वास्तु तो इसको कहते हैं, वास्तु भगवान चिदानंदमूर्ति प्रभु, पुण्य-पाप के राग से रहित वस्तु पड़ी है, अन्दर आनन्दगुण पड़ा है। वस्तु आत्मा है उसमें बसना, अतीन्द्रिय आनन्द की प्रतीत करके बसना, इसका नाम भगवान वास्तु कहते हैं। समझ में आया? पाँच-पच्चीस लाख का मकान बनाया, लाखो का खर्च करके प्रवेश किया, वास्तु किया, राजा को बुलाये.. अनन्त बार किया। उसमें कुछ है नहीं।

भगवान आत्मा, शुभ और अशुभ विकल्प उठते हैं, वह राग है। लेकिन उसको धर्म मानता है, क्या करे? वही जात, मानों मैंने कुछ किया, मैं दुकान से हटा और कुछ करते हैं, धर्म हुआ। वहाँ वही पुण्य की जात है, सुन न। यदि राग मंद करे तो। और मान के लिये करता हो, मुझे कोई गिने, धर्म में गिने, ... गिने, आगे बिठाये, उसके लिये दान, दया, पूजा और भक्ति करता हो तो पापी (है)। पाप है, पुण्य भी नहीं है। समझ में आया? तो यहाँ तो कहते हैं कि '**हमने यह निश्चय किया कि उसके अभिप्राय में इन्द्रादिसुख और सिद्धसुख की एक जाति का श्रद्धान है।**' समझ में आया?

'**तथा कर्मनिमित्त से आत्मा के औपाधिक भाव थे, उनका अभाव होनेपर आप शुद्धस्वभावरूप केवल आत्मा हुआ।**' मोक्ष तो उसको कहते हैं कि भगवान आत्मा, उस मैल से दूर होकर, पुण्य-पाप के परिणाम से पहले दूर होकर अनुभव करे, बाद में स्थिर होकर पुण्य-पाप का भाव छूट जाये, मलिन भाव छूट जाये, अकेला आत्मा स्वभावरूप रह जाये उसका नाम भगवान मोक्ष कहते हैं। मोक्ष कोई दूसरी चीज नहीं है। ऊपर लटकना वह मोक्ष नहीं है। आत्मा में परमानंद का शुद्ध स्वभाव जो अन्दर शक्ति में पड़ा है, वह प्रगट हो जाये उसको भगवान मोक्ष कहते हैं। 'मोक्ष कह्यो निज शुद्धता' 'आत्मसिद्धि' में है।

मोक्ष कह्यो निज शुद्धता, ते पामे ते पंथ,
समजाव्यो संक्षेपमां, सकळ मार्ग निर्ग्रंथ।।

सर्वज्ञ परमात्मा ने आत्मा का मोक्षमार्ग (दर्शाया)। जो परिणाम मोक्ष के निर्मल है, वैसा ही निर्मल अल्प जात का, जाति एक, परन्तु अल्प अंतर पुण्य-पाप से रहित सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र निर्विकल्प परिणति होती है, वही मोक्ष का मार्ग है, दूसरा कोई मोक्ष का मार्ग है नहीं। अज्ञानी ने दूसरा मोक्षमार्ग मान रखा है, वह मिथ्यादृष्टि मिथ्यादर्शन शल्य का पोषक है। उसमें धर्म तो नहीं है, पुण्य का भी ठिकाना नहीं है।

(श्रोता :-- प्रमाण वचन गुरुदेव!)